# दु:स्वप्न

हिन्दी ADDA

अरविंद

# दु:स्वप्न

मिस मुस्कराहट का परिचय

लोग नहीं मैं ही कहता हूँ कि मैं मूलतः आवारा हूँ और एक दौर था मुझे केवल मिस मुस्कराहट से लेना देना था। मिस मुस्कराहट एक तरह से मेरी पड़ोसन थीं। और मेरे पिताजी के चीफ की दूसरी बेटी भी। और उनकी अम्मा, सॉरी! मम्मा जो तीन बच्चों के बाद मोटापे के एक बहुत अच्छे साँचे में ढल चुकी थीं, नजदीकी ब्यूटी पार्लर की शान और संचालिका थीं। खासकर खूब चटक रंगों वाले लिपस्टिक अपने होठों पर उसकी आत्मा को घिसते हुए लगाती थीं। और होठों के किनारों पर बेहद बारीक आउट लाइनर देखने वालों को अपनी सीमा में बाँध लेता था। वे जब किचन के नाजुक पसीने वाली गर्मी में होती थी तब भी उनके चेहरे की गरिमा से वे सारी चीजें नहीं उतरती थीं। मैं सोचता हूँ कि वे मेक अप उतार कर ही सोती होंगी। लेकिन वहाँ तक मुझे नहीं पहुँचना हैं। मुझे तो बस मिस मुस्कराहट तक ही रह जाना है। हाँ! तो मिस मुस्कराहट के चेहरे पर भी अपनी मम्मा के गुणों की वे सारी परछाइयाँ थीं जिसका लेखा जोखा और पूर्वानुमान कोई पहले भी लगा सकता था। ऐसा जानिए कि दोनों एक ही कसौटी पर दो अलग अलग उम्र वाली थीं। मिस मुस्कराहट के बारे में आपकी जानकारी के लिए बता दूँ कि वे कुँआरी थीं। मतलब शादीशुदा नहीं थीं।

ऐसा मैंने एक घटना के बाद निष्कर्ष निकाला था। और हलके पाउडर या क्रीम वाले चेहरे के साथ अपनी मम्मा की ब्लेक एंड व्हाइट संस्करण लगती थीं... लेकिन वह चीज जिस पर मैं बेहोश होने की हद तक फिदा था वह थे उनके होंठ। इतने पतले कि जैसे होंठ होने की औपचारिकता भर पूरी कर रहे हों। नक्काशीदार। और बेहद मुलायम भी थे, यह मैंने कहानी के अंत में छूकर देखा था। इस कयामत वाली जगह पर लिप लिक्विड लगाती थीं... वह लिक्विड वहाँ उन रसों की उत्पत्ति कर देता था, जो कभी कभी दाएँ या बाएँ भाग रहे होते थे। उनके होंठों के ठीक ऊपर बाए तरफ जो काला तिल था, उसे शायद मेरी नजर ने पैदा किया था। क्योंकि मैं मानता हूँ कि पहले वे नहीं थे। यह तिल मेरे अंदर एक साहस पैदा करता था। वह एक ऐसी चीज थी कि मुझे लगता था मिस मुस्कराहट बाखुशी मेरे नाम कर सकती थी। लेकिन बस लगता रहा। और इसी नीव पर दुःस्वप्नों की शुरुआत होती है। जो रिसकर मेरे यथार्थ में भी टपकने लगते हैं। आप को कोई अतिरिक्त आनंद आए इससे पहले मैं बता दूँ कि कहानी अपनी शुरुआत की तरह खुशनुमा नहीं है। यह एक डरावनी किस्म कहानी है।

मेरा घर

बाबूजी जी स्वभाव से यूकेलिप्टस की तरह एकदम सीधे थे। वे एक लेखा जोखा रखने वाले केंद्रीय कर्मचारी थे। ठीक ठीक कहूँ तो जो सरकार की लूट-पाट की योजनाओं का हिसाब और बही खाता रखने की जिम्मेदारी थी। हमारा घर उत्तर प्रदेश और बिहार की सीमारेखा पर था। अम्मा आरा जिले से थीं। और हमेशा सीधे पल्ले में रहती थीं। कभी कभी बोलती थीं। उनका बोलना इतना नगण्य था कि आवाज से भरोसा उठा देने वाला था। गाहे बगाहे अम्मा जब भी बोलती घर में मिसरी की परछत्ती छा देती। घर में खट पट एकदम नहीं होती थीं। मेरे घर का जीवन बिलकुल गांधीजी के भोजन की तरह, नमकविहीन खाने की तरह था। गांधीजी का जिक्र इसलिए कि पिताजी गांधीजी को अन्य देशभक्तों के मुकाबले ज्यादे पसंद करते थे। मैं जैसा कि घोषित आवारा था। इसलिए पढ़ने में कोई दिलचस्पी नहीं रह गई थी। घर के ताखों में एकाध श्योर सीरिज के अलावा जो जो दो चार किताबें थीं, वे पिताजी की थीं। जिस पर मैंने गांधी के नाम के सिवा कुछ नहीं पढ़ रखा था। बेहद मन बना कर छुट्टियों में कभी कभार पिताजी उन किताबों को निकालते। और शायद दो चार पन्ने पढ़ कर रख देते थे। बाबूजी दिन भर में मात्र एक पेज से ज्यादा नहीं बोलते थे। अम्मा थी तो आफत विपत के समय ही कुछ कहती थीं। सब कुछ घर में घड़ी की तरह यंत्रवत चलता था। जैसे आप जब भी आएँ सुबह के वक्त हमेशा चाय तैयार मिलती थी। खाने में किस दिन क्या बनेगा निर्धारित था।

शुक्रवार के दिन बाबूजी के लिए सैजन की सब्जी बनती थी। सैजन खरीदना नहीं होता था। कालोनी में ही बगल के पेड़ से तोड़ कर लाया जाता था। जिन महीनों में सैजन के सीजन का दिन नहीं होता था उन दिनों सूरन, टिंडा, अरुई, सेम, ऐसी ही कोई रहस्यमयी सब्जी बनती थी। बाबूजी जब शाम में आते थे तब अम्मा कोई न कोई हलवा जरूर बना के रखती थीं। मान लीजिए किसी दिन वे न ही आए तब भी शाम में हलवा बना मिल जाता था। अगले दिन भी यह जानते हुए कि पिताजी नहीं आएँगे, ढलती हुई शाम में हलवा मिल सकता था। कोई विशेष कारण नहीं, बस इसलिए कि यह आदत और दिनचर्या का अटूट हिस्सा बन चुका था। शनिवार चोखे और खिचड़ी का दिन था। माँ चोखा इतना लाजवाब बनाती थी कि मैं मान बैठा था कि उसकी

पसंदगी अगर होगी तो यही है। घर इतना सादगीपूर्ण था कि जैसे शनिवार के दिन दूरदर्शन पर शाम चार बजे आने वाली कोई पुरानी ब्लैक एंड वाइट फिल्म का संस्करण। सब कुछ मजे में और दुरुस्त था कि तभी पटना के एक कस्बाई शहर से डेल्ही को अचानक हुए ट्रान्सफर में एकाएक सब कुछ तहस नहस हो गया। और शायद सीधे सीधे इसका जिम्मेवार मैं साबित हुआ था। यह कहानी इसी संदर्भ में है।

एक सुबह घर से निकलते ही की भूमिका

हम तबादले में जैसे उजड़-पजड़ के आए और फिलहाल एक समय तक डेल्ही मेरे लिए अनजान जगह रही।

मुझ जैसे आवारों के लिए पान की दुकान किसी मंदिर की हैसियत रखता था। हाथ में जली हुई सिगरेट को अगर आप अगरबत्ती समझना चाहते हैं तो समझ सकते हैं। मैंने कालोनी के बाहर, जहाँ आंटी जी का पार्लर था, उसके सौ मीटर के घेरे में पान की दुकान को अपना अड्डा बना लिया था। मैं घर की बजाय वहाँ ज्यादा मिल सकता था। अगर नहीं मिलूँ तो मेरी सायकिल अक्सर वहाँ खड़े मिल सकती थी। वह इस बात का इशारा करती थी कि मैं कहीं भी होऊँ, जल्दी यहाँ पहुँच सकता हूँ। मेरे हाथों और होंठों के इर्द गिर्द अक्सर सिगरेट की एक काली गंध मिल सकती थी। मिस मुस्कराहट का गुजरना वहीं से एक खास समय के लिए होता था।

अम्मा, जिनकी हालत कालोनी के चकाचौंध से, ट्रैफिक में फँसी किसी गाय की तरह हो गई थी, घर से कम निकलती। चूल्हे चौकों से निकलती तो बरामदे में बैठकर चावल के दाने चुनती। जैसे दुनिया का सारा सुख उसी में समा आया हो। मैंने उनसे कई बार कहा कि अम्मा चलो डेल्ही घुमा लाता हूँ। लेकिन जैसे ही वे चौराहे से आगे बढ़तीं ऐसे घबराने लगतीं जैसे उन्हें दिल का दौरा आने वाला हो। कहतीं कि बस बचवा यहीं तक। और कोई सब्जी ली और घर की और लौट पड़तीं। कई बार पिताजी ने कहा कि यह आरा नहीं है। यह डेल्ही है बेगम। ये उलटा पल्ले करना छोड़ो और जरा सीधे पल्ले में भी रहा करो। अभी कौन सी उम्र चली गई है। अम्मा को जवाब देने में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वे अपने को ऐसे रखतीं जैसे कुछ सुना ही नहीं। पिताजी कहते कि मुन्ना इस बार गाँव जाना तो दो बोरा चावल और लेते आना। और हो सके

तो कुछ कंकड़ अपनी ओर से भी मिला देना। इसकी तो दुनिया यही है। और हँसने लगते।

पहले तो मैं अकेले यहाँ वहाँ घूम आता। चिकनी सड़के और हरियाली, पोश कालोनियाँ और उन्मुक्त लड़कियाँ मन को मयूर बना देती थीं। राजधानी के आस पास रहने का अलहदा एहसास अब जीवन में कायम होने लगा था। पढ़ना तो था नहीं। लेकिन राजनीति शास्त्र जैसे विषय लेकर मैंने पढ़ने का कोरम शुरू कर दिया था। वह इसलिए कि मन में कभी कभी ख्याल आता था कि आगे चलकर चुनाव लड़ा जाएगा। जैसा कि हमारी भारतीय राजनीति की बुनियादी योग्यता एक आँकड़े में दिखने लगी थी। यह एक हौसलादायक आँकड़ा था कि क्षेत्र के जितने आवारा थे वे बाद में अपराधी भी घोषित हुए थे और फिर हत्यारे की योग्यता हासिल की। और जेल से विधायकी का चुनाव लड़ा और जीत गए। मेरा मकसद इतना बड़ा नहीं था पर यह जरूर था कि कुछ नहीं तो कम से कम लोकतंत्र की छोटी इकाई प्रधानी पर तो जरूर हाथ आजमाऊँगा। पिताजी ने अगर साथ दिया तो प्रमुख का चुनाव भी लड़ा जा सकता था। और इसके लिए कम से कम बेसिक जानकारियाँ जरूरी थी। मसलन विधायिका क्या है? संसद कैसे काम करती है? हमारा लोकतंत्र क्या है? और योजनाएँ कैसे बनती हैं? और उस पर हमारे नौकरशाहों और जनता के प्रतिनिधि लूटपाट का कैसे गणितीय मिथक रचते-रचाते हैं। इन सभी कामों का विश्लेषण मेरे लिए अहम था।

इसके उलट किताब पलटते मुझे लगता था कि मेरे पाठ्यक्रम में प्लेटो, अरस्तू, मैकियावेली आदि के राजनीतिक सिद्धांत एक खुबसूरत गल्प या मजाक थे। इसलिए ये सब व्यक्तित्व मेरे लिए बस एक पौराणिक मिथक भर थे। ये कभी रहे होंगे, ऐसा मानने का मन नहीं करता था। हमारा तंत्र इन सब सिद्धांतों पर कितना आधारित था, यह भी मैं ठीक ठीक नहीं जानता था। और इन विद्वानों का हमारे निजी जीवन से, उसके दर्शन और गणित से कभी संबंध रहा होगा,इस बात से मैं इनकार करता रहा। हमारी सरकार, संस्थान, योजनाओं और उसके क्रियान्वयन से आँकड़ा छत्तीस का ही था। हमारी सरकारी योजनाओं के यथार्थ में ऐसे कई गणितीय धोखे थे जो अपने निष्कर्षों में किसी जादुई यथार्थवाद की तरह साबित होने वाले थे।

खैर !

अभी तो मेरे खेलने खाने और गाने के दिन थे। मैं चाँदनी चौक चला जाता। कनाट प्लेस घूम आता था। दरियागंज चला जाता। वहाँ पटरियों के अगल बगल कई साहित्यिक पत्रिकाएँ और महत्वपूर्ण किताबें धूल खाते खाते जर्जर हो चुकी थीं। उसके अगल बगल से शानदार गाड़ियाँ और लोग जाते थे। ऐसी गाड़ियाँ जो केवल और केवल महँगे शब्द में अर्थ भर देने के लिए बनी थी, उसके ऊपर से गुजर जाती रही। और विक्रेता की ऊब और खीज देखकर ऐसा लगने लगता था कि वह दिन जल्दी ही आने वाला है जब वह इन सब पोथियों को उठाकर वह नजदीक वाले बस स्टैंड पर मूँगफली वाले को बेच आएगा। और कोई बुद्धिजीवी अनजाने में उसपर मूँगफली लेकर टूँगता हुआ बस में चढ़ जाएगा... और सिगरेट के छल्ले बनाएगा। और किसी मोड़ पर वह उस कागज को, जिसपर किसी राजनितिक व्यक्तित्व का विचार लिखा रहेगा, को दोनों हथेलियों के बीच रगड़ कर खिड़की के बाहर फेंक देगा। वह पन्ना सड़क पर किसी झोंके से उड़कर पहले तो विचार से निकलेगा फिर सीधे सभ्यता से निकल कर ब्रह्मांड में गुम जाएगा... और जिस दाढ़ी वाले आदमी का उस कागज पर चित्र है, उसका नाम मार्क्स है। कहते हैं कि एक दिन उसके बल पर किसी देश में क्रांति हुई थी। सरकार बदल गई थी। वैसे ही जैसे अपने यहाँ गांधी ने किया था। और देश आजाद हुआ। सब कुछ के बावजूद गांधी क्रांतिकारी कभी नहीं कहलाए।

भारतीय संदर्भों में जो क्रांतिकारी कहलाए वे फाँसी चढ़ने वाले थे। आजादी मिली, ऐसा हम पढ़ते आए हैं। लेकिन लोग समझ नहीं पाएँ कि आजादी किस चिड़िया का नाम है। और बुद्धिजीवी इसकी अलग अलग हसीन व्याख्या करते रहें, जो आज तक जारी रही। जो नियम हमने लोकतंत्र के नाम पर लागू किए थे, वह नियम कम और नाटक ज्यादा था। कागजी खानापूर्ति के बोझिल नाटकों के साथ न्याय जैसे किसी कहानी का जादुई करतब भर था। जिसका असर तभी तक रहता था जब तक हाथ में पैसे थे... अंबेडकर, हीगेल, सिमोन, देरिदा, फूको, के विचार जो उसी फुटपाथ वाली किताबों में रचे बसे अपने भारतीय दिन का इंतजार कर रहे थे। उन स्वप्नों पर कोई दुनिया कायम होगी। लेकिन मौजूदा माहौल में यह ख्याल ही एक छलावे की तरह लगता था। और कुछ हो न हो, कोई आए या न आए, लेकिन कम से कम इन किताबों को उद्धार के लिए कोई आएगा या नहीं, यह भी मुझे ठीक से पता नहीं था। और मुझे इन सबमें जैसा कि पहले ही बता चुका हूँ कोई दिलचस्पी नहीं थी। आते जाते नजर पड़ जाती

थी। तो बस एक सोचना भर हो जाता था। मैं था कि दिन भर उस पान के दुकान के सिवा जहाँ भी रहा भटकता रहता। बाते मैं और लिखूँगा पर उसके पहले एक बहुत सज धज कर आती सुबह पर एक नजर जो मेरे जीवन के रंगत को पलट कर रख देने वाली थी।

एक सुबह घर से निकलने के दृश्य में एक ब्रेक जो किसी पूँजीवादी विज्ञापन की तरह खुबसूरत है...

उस सुबह उठकर मैंने पाया कि सिगरेट खत्म हो गई है। और दिमाग के धुँधले भाप को पोछने के लिए उसके गर्माहट की तलब होने लगी थी। मैं चुरा कर पीता था। कारण थे पिताजी। पिताजी किसी भी मादक द्रव्य से न केवल परहेज करते थे बल्कि एक आधे घंटे के ऊपर तक इस पर भाषण भी तैयार कर रखा था। हो सकता है कि इन सब बातों पर गांधी जी का असर रहा हो। मैंने पूछा नहीं था। बस एक अनुमान भर लगा रखा है। क्योंकि गाँव में जिस किसी भी व्यक्ति को ऐसा करते देखते उसे बाकायदा बुलाकर उपदेश की घुट्टी पिलाते थे। लेकिन मेरे जाने में उनकी बातों का असर रत्ती भर नहीं होता था। खैनी खाने वाला इतना जरूर करता था कि जब भी वह हथेली को मलता आगे पीछे देख जरूर लेता कि पिता जी है या नहीं।

उस सुबह जब पान की दुकान से जब मैं घर की ओर बढ़ रहा था तब मिस मुस्कराहट को देखा। यह मेरा पहला देखना था। सुबह की नहाई हुई... जिसे विद्यापति ने सद्यस्नात कहा है। बालों में हलकी कंघी फेरे हुए। स्कूटी से जाते हुए। स्कूटी लाल रंग की थी। लाल रंग की यह स्कूटी बनाने वाले कंपनी का मालिक जैसा कि हमेशा होता है, एक पूँजीपति था। और उसे लाल रंग से बहुत लगाव था। उसके आँकड़े बताते थे कि यह रंग भारतीय संदर्भों में बेहद शुभ और पूजनीय है। और इस रुझान को देखते हुए उसने इस रंग की बनावट कुछ ज्यादा करनी शुरू कर दी थी। कुछ ऐसे ही समीकरणों से पूँजीपति घर की बेटी मिस मुस्कराहट भी थीं। जैसा कि बता चुका हूँ कि मिस मुस्कराहट के डैड उसी विभाग में एक बहुत बड़े पद पर थे, जिस विभाग में मेरे पिताजी थे। वे उनसे कई पायदान नीचे थें। मिस मुस्कराहट के डैड ने बहुत सारी प्रोपर्टी बना रखी थी। उस रुपये का पेड़ उगाने वाली नौकरी के साथ उन्होंने कई सारी एजेंसियाँ अपने नाम से ले रखी थीं। इसके अलावा उनका दिल्ली जैसे इलाके रियल

स्टेट का करोड़ों का कारोबार था। पान वाला बताता है कि अभी दो साल पहले शादी में अपनी बड़ी लड़की को उसने कोई जगुआर दी थी।

मैं मिस मुस्कराहट को इस पूँजीवादी नजर से तो देखना नहीं चाहता था पर असर तो सामने आ ही जाता था। उस दिन बेहद हलकी और मुलायम धूप थी। ऐसी धूप जिसमें किसी चीज की ठीक ठीक परछाईं तक न बन पाए। इसलिए ठीक से नहीं बता सकता कि उसके प्रेम की मेरे अंदर परछाईं बनी थी या नही, लेकिन ऐसा देखते ही लगा था कि बस इसी लड़की की तो अपने अंदर कहीं खोज थी। वह कालोनी के मोड़ के पार्लर पर रुकी अंदर गई जो उसकी मम्मा का था और एक हैंड बैग के साथ बाहर आई। उसने हैंड बैग को अपने बाँहों में लटकाया और चल दी। बाद में पता चला कि वह हैंड बैग कोरियन था। और साँप के चमड़े का बना था। वह पान की उस दुकान से होते हुए गुजरी। जहाँ अब मैं खड़ा था। सिगरेट के कश लेते हुए मैंने महसूस किया कि नशे की गहराई दुगुनी हो गई है। इसके साथ ही मैंने यह भी नोट किया वहाँ दुकान पर खड़े हमउम्र लड़कों में एक चमक सी आ गई। यह दृश्य बिलकुल वैसे ही था जैसे हम किसी स्कूटी के विज्ञापन में किसी ख्यात अभिनेत्री को टेस्ट ड्राइव करते हुए देखते हैं।

कुछ सवाल रह रह कर मेरे जेहन में उठ जाते हैं। जैसे प्रेम क्या पूँजी पर सीधे सीधे आधारित है? अगर नहीं तो क्या प्रेम को पूँजी अप्रत्यक्ष रूप से चुटकी भर नमक जितना भी प्रभावित करती है। अगर आपका उत्तर सकारात्मक रूप से दशमलवांश भी आता है तो अपनी बात कहने की एक जगह बन जाती है। मैं हमेशा से यह सोचता रहा कि प्रेम में दिए गए उपहारों में एक गुलाब महत्वपूर्ण है या कोई विमान? हमारे जीवन में संसाधन जो कि पूँजी की ही उपज हैं, कितने जरूरी हैं। हमारे द्वारा बनाया गया समाज में कोई न्यूनतम और अधिकतम उपभोग का कोई मानक है? आप हँस सकते हैं पर मैं इस बात को प्रेम के संदर्भ में सोचता हूँ कि मान लीजिए कि मिस मुस्कराहट को मुझे कुछ देना ही हुआ तो दो समानधर्मी प्रेम वाले दो लड़कों में (जिसमे मैं हूँ और मेरा रकीब है) वह किसे वरीयता देगी? पहला प्रेमी ताजमहल बना देता है और मेरे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है (रखना तो नहीं चाहिए पर चलिए एक शर्त भी रख देते हैं कि दोनों को वह उतना ही चाहती है)?

यह मैं इसलिए कह रहा हूँ कि मिस मुस्कराहट ने गली के आखिरी मोड़ पर जहाँ एक ब्रेकर है वहाँ अपनी स्कूटी रोक दी है। वहाँ एक लड़का है जो इंतजार में है। वह यामाहा की एक महँगी मोटरसायकिल पर है। वहाँ रुककर वह उससे कुछ देर तक बात करती है। और अपना आईपोड जो दिखाई तो नहीं दे रहा पर यकीनन किसी शानदार कंपनी का होगा, उसे देती है। लड़का उसे अपने कान में लगाता है और दोनों चल देते हैं। हो सकता है कि वह इयर फोन उसी लड़के का रहा हो। हो सकता है कि वह मिस मुस्कराहट का ही रहा है। हो सकता है कि वे दोनों एक ही कालेज में पढ़ते हों। हो सकता है कि वे एक ही इयर में हो। हो सकता है वे दोनों प्रेम में हो। और हो सकता था कि मेरे साथ प्रेम की कभी संभावना भी बने तो मेरी स्थिति त्रिकोण के उस सिरे पर रहे जहाँ से मिस मुस्कराहट की दूरी अनंत पर बैठे। जिसे मेरी अदनी सी सायकिल पूरी न कर सके।

एक शाम शराब के नाम। ...चीफ की दावत ...एक छोटा सा-मजाक

लोग कहते हैं और मैं मानता भी हूँ कि धर्म के बाद नशे में शराब का नशा सबसे बुरा है। लत लग जाए तो जीवन या तो तबाह कर देती है। कुछ परम शराब भक्त कहते हैं कि बना भी देती है। शराब सदियों से मशहूर शायरों, कलाकारों, और बुद्धिजीवियों के चिंतन का सहारा रहा है। यह धरती पर मिलने वाली सबसे ख्यातिलब्ध चीज थी। प्रखर मार्क्सवादियों, पूँजीपतियों के साथ साथ मजदूरों का भी संबल रही है। यह वर्ग अंतर जरूर रहा है कि जहाँ ये लोग वोडका, व्हिस्की, रम इत्यादि के विदेशी ब्रांड पीते रहें वही मजदूर जैसे रिक्शाचालक, सफाई करने वाले, चौकीदार, कुली, ठेला वाले, बेलदार, इत्यादि ठर्रे, महुए, ताड़ी और जहरीली शराब पीते रहें। जहाँ तक मुझे पता है कि गांधीवादी चिंतन में यह तरल पेय सिरे से गायब है। लेकिन उस शाम की बात है जब मैंने भी इसकी शुरुआत कर दी थी। इसकी सीधे सीधे वजह पिताजी थे। और पिताजी के लिए वजह मिस मुस्कराहट के डैड!

जैसा कि मैंने पहले बताया था कि पिताजी केंद्र की एक नौकरी में लेखा जोखा अधिकारी थे। और मिस मुस्कराहट के डैड भी उसी विभाग में ऊँचे पद पर थे। सीधे सीधे वे चीफ की हैसियत से थे। पहले तो मुझे नहीं पता था। लेकिन एक दिन सुबह की सैर से लौटते हुए मुझसे इस बात का जिक्र पिताजी ने उनके आलीशान घर को

दिखाते हुए कहा था कि वह देखो मेरे चीफ का घर। और फिर वे चुप हो गए। उस चुप्पी के घनत्व में इतना दम था कि एकाएक मुझे लगा कि मैं छोटा हो गया। यह सूचना तो मुझे देर सवेर मालूम चल ही जाती। लेकिन मुझे दिखाकर अचानक चुप हो जाना, मुझे साल गया। मैं जानता था कि पिताजी इतने नेक थे कि किसी का अनर्गल पैसा लेना नहीं चाहते थे। जिसे कि हम घूस कहते थे। अगर लेते तो बस एक इशारे से इतनी रकम तो कमा ही लेते कि गाँव से जुड़े किसी अच्छे कस्बे में अच्छा सा देखने लायक मकान बन जाता। उस दिन पिताजी क्या कहना चाहते थे। उनकी चुप्पी का कई सारा अर्थ था। उस आलीशान हवेली के ऊपर जो आसमान चमक रहा था वह चटक नीला था। लेकिन वही आसमान वहाँ से कुछ दूर की झुग्गी झोपड़ियों पर भी चमक रहा था। मैं सोचता था कि एक ही समय दो अलग अलग जगह चमकता वह आसमानी टुकड़ा किसी समय की व्याख्या के लिए कितना महत्वपूर्ण था। बिलकुल पिताजी के चुप्पी की तरह।

एक फीके दिन की एक शाम जब वे घर आए तो थकान में डूबकर बरामदे वाली कुर्सी पर पसर गए। शाम में माँ हलवा रख गई। देर तक बैठे रहे। बरामदे में शाम भरती गई। और रात हो आई। मैं ढली रात जब घर आया तो माँ ने कहा कि शायद पिताजी की तबियत ठीक नहीं है। जाकर पूछ लो कोई दवा तो नहीं लानी होगी। मैं गया और उनकी तबियत के बारे में पूछा और देर तक बैठा रहा। खाना खाने के बाद भी बैठा रहा। जब सोने के लिए अपने कमरे में जाने लगा तो उन्होंने कहा कि मुन्ना! किसी शराब का नाम जानते हो। कौन सी शराब सबसे अच्छी होती है।

दफ्तर में बात ही बात में पिताजी के चीफ ने घर में दावत रखवा ली थी। जैसे कि होता है अक्सर चीफ तानाशाह होते हैं। मिस मुस्कराहट के डैड भी उसी में से एक थे। पिताजी से उसने यह कह रखा था कि पार्टी में शराब उसी तरह जरूरी होनी चाहिए जैसे कि पूजा में अगरबत्ती। और सब तो ठीक था। पिताजी सहर्ष राजी थे। पर शराब की बात से वे बिदक गए। उन्होंने कहना चाहा था कि साहेब और सब तो ठीक पर मैं शराब पीने पिलाने की दूर उसके बारे में सोच भी नहीं सकता। बस यही बात उनके गले में अटक कर फाँस बन गई। चीफ के सामने निकल ही नहीं पायी। और इसी सोच में वे देर तक बैठे रहे। बाद में जब उस चपरासी के माध्यम से यह बात कहलवाई, जो

रिश्वत लेने में दलाली का काम करता था, तो चीफ हँसने लगे। 'अरे पीता नहीं है तो पिला तो सकता है' सुनकर पिताजी की कनपटी की एक नस तनाव में तन गई। कोई और दिन और कोई और आदमी होता तो पिताजी कान के नीचे एक दे देते। पर एक मिनट पिताजी हिंसा में विश्वास नहीं करते थे। तब? तब वे क्या करते मुझे सोचने के लिए कुछ समय चाहिए।

अगले दिन मैं दौड़ता रहा। घर की सजावट अति सामान्य थी। लाफिंग बुद्धा के सिवा अनर्गल कोई ऐसा सामान नहीं था, जिसकी जरूरत न लगे। सबकी जरूरत थी। परदे, चादर भी थे पर महँगे नहीं थे। स्टेट्स सिंबल का एक जर्रा तक न था। खादी की उपस्थिति विशेष थी। माँ को ऐसा कोई ज्ञान और शौक नहीं था जिससे वह सिलाई कढ़ाई-बुनाई जैसा कोई गुण रखती। मैं चादर, परदे। क्रोकरी, चाय के अच्छे बरतन, कालीन, शराब पीने के खास गिलास, खास नमकीन, सोडा, मुर्गे, अंडे मछली आदि इत्यादि सामान खरीद लाया था। यहाँ तक कि घर में फ्रिज जैसी सर्व साधारण चीज नहीं थी। तो अलग से बर्फ भी लानी पड़ी थी। मेरे घर में एयर कंडीशन भी नहीं था। अलबता बोनस के पैसे से कूलर का जुगाड़ जरूर हुआ था। पिताजी के विभाग में ऐसे कई पहुँचे हुए चपरासी थे जो केवल दलाली की बदौलत अच्छी रकम बटोर चुके थे। और सुख के वे सभी साधन जुटा चुके थे जो हम लोग सोच तक नहीं सकते थे। खैर! माँ के साथ मैं घर की सजावट में लग गया था। इन सभी कामों में उस दलाल चपरासी ने काफी मदद की... कहा जाए कि निर्देशन किया था।

रात के करीब नौ बजे चीफ और उनके दोस्त आए थे। तब तक हम दिन भर के कामों से थककर चूर हो गए थे। वे पहले से ड्रिंक किए हुए थे। बरामदे में जहाँ थोड़ी सी ऊँचाई है वहाँ उनका दोस्त लडखड़ाया था, जिसे मैंने लपक कर थाम लिया। चीफ ने कहा कि करमचंद बहुत प्यारा और फुर्तीला बेटा है तुम्हारा। पिताजी ने आगे बढ़कर चीफ का अभिवादन किया था। मैंने गौर किया कि पिताजी की आँखों में अजब किस्म की विनम्रता चमक रही थी। जो बमुश्किल से खिंच तान कर आई थी। चीफ की आवाज कुत्ते और शेर की गुर्राहट की मिली जुली आवाज थी। शराब पीने से उसकी आँखों की लालिमा उसके नीचे फैले कालेपन पर चढ़ आती थी। और भयावह दिखती थी।

दलाल चपरासी किचेन में मदद कर रहा था। ट्रे वही ले के जाता था। बीच में कुछ घट जाता था तो मुझे बुला लेता था। मैं भी किचेन में ही था। और मिठाइयों को सजाने में मदद कर रहा था। बोतल खोलने और ढालने में मदद कर रहा था। और सामान तो रेडीमेड आ गए थे पर पकौड़े तुरंत बनाकर गरम गरम परसे जाने थे। मछली हल्दी लगाकर रख दी गई थी। और समय पर माँगे जाने पर तली जानी थी। सो रुककर मैं अम्मा की भी मदद कर दे रहा था। चीफ के चार दोस्त थे जो उसी विभाग से थे। क्या पता वे चीफ से भी ऊँचे पद पर रहे हों। जैसा की बातों से अनुमान लगाया जा सकता था। और कुल मिलाकर वे बाते कम और हल्ले ज्यादा कर रहे थे। दलाल चपरासी अपने चीफ को छोड़कर और शेष चार दोस्तों के लूटपाट के हिसाब का बखान कर रहा था। वह उनकी औकात बता रहा था। जिसके आगे मैं दब दब जाता था और अम्मा सहम सहम जाती थी।

पिताजी वहीं निष्क्रिय बैठे थे। और वे जैसा कि मैंने पहले बताया कि बात कम करते थे और जो पियेला है उससे सिवाय उपदेश के कुछ बात कर भी नहीं सकते थे। अचानक चीफ चिल्लाने लगे। उनकी चिल्लाहट सुनकर मैं अंदर गया। चीफ ने जैसे ही मुझे देखा अपने पास बुलाया और पिताजी से मुखातिब हुआ। घर में सोफा एक ही था लंबा वाला। जिस पर वे चारों बैठे थे। सोफा जैसे दम तोड़ने वाली स्थिति में था। चीफ ने मेरा हाथ पकड़ा और पिताजी से पूछा कि बताओ तुमने अपने बेटे के भविष्य के लिए क्या योजना बनाई है। कितनी जमीन है। कितने की पालिसी है... कितना इन्वेस्ट किया है? भगवान न करे मान लो कल तुम मर ही गए तो सोचा है कि बीवी बच्चों का क्या होगा? इसीलिए कहता हूँ कि हाथ धोकर बस कमाओ। पैसे तुम्हारे सर के दाएँ बाएँ से होकर जा रहे हैं। बस पकड़ लो। अपना नहीं सोचते हो तो बच्चों का तो सोचो। गाँव में कम से कम एक पक्का मकान बनवा लो। जानते हो तुम्हारे एक साइन की कीमत तुम्हें लाखों में मिल सकती है। करना कुछ नहीं है। फँसना-फँसाना कही नहीं है। अरे ऊपर हम लोग किस दिन रात के लिए बैठे है।

...क्यों भाई! उसने सामने बैठे अपने दोस्त की ओर देखते हुए कहा था, जो नशे में धुत्त था। जाओ बेटा सोडा ले आओ कहकर उसने मेरा हाथ छोड़ दिया और शराब की बोतल पकड़ ली। मैंने सोडा ले जाकर दिया और किचेन में लग गया। दलाल चपरासी ने जोड़ा

कि साहेब आज पूरा मूड में हैं। चीफ की बात में हरियाणा का बोली का पूरा असर था। एक बार फिर हल्ला हुआ तो मैं फिर गया। क्या देखता हूँ कि चीफ पिताजी को एक शराब की गिलास थमा रहा है। और कह रहा है कि बस थोड़ा सा चखो। मेरी कसम। मेरी बात की तो कुछ कीमत ही नहीं है। पिताजी ने गिलास पकड लिया है। और थामे थामे खड़े हैं कि क्या करें। पीओ यार ...पीओ। ...एक घूँट से क्या होने वाला है। दुनिया पलट थोड़े जाने वाली है। मेरा मन किया कि जाकर उसके कान के निचे एक चमाट दूँ। लेकिन क्या किया जाए। मैं आगे बढ़ा और पिताजी के हाथ से गिलास छीन लिया और चीफ से बोला कि पिताजी नहीं पीते हैं और नहीं पिएँगें। थोड़ी देर तक शांति छाई रही। फिर चीफ अचानक हँसने लगा। अरे मैं तो बस मजाक कर रहा था। तुम तो बेवजह लोड ले लिए बेटा! मजाक! यह कैसा मजाक था। मैं समझ नहीं पाया। और बात आगे न बढ़े इसलिए मैं चुप रह गया... अंत में मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि मजाक की भी खोज किसी गंभीर मुद्दे के संधान के लिए किया गया होगा।

चीफ की दावत रात के दो बजे खत्म हुई। इन सभी घंटों में मुझे और घर वालों को घुटन से ज्यादे कुछ नहीं मिला था। चीफ ने जाते हुए पिताजी से कहा कि करमचंद भाई हमारी भी मदद किया करो। क्या बिगड़ जाता है। साथ में मिल जुल कर रहने में फायदा है। और फिर माता जी के लिए उसने पार्लर का पता दिया। और कहा की जब भी जरूरत हो निःसंकोच चली जाया करें। और घर तो अपना ही है। कभी कभी आया करो आप सब। मुझे पता नहीं कि कोई चीफ अपने कनिष्ठ को कभी घर भी बुलाता हो। पर शराब माथे पर चढ़ी हो तो जरूर बुलवा देती है। हम हाँ में हाँ मिलाते गए। इस तरह से दावत खत्म हुई। घर में सिगरेट, शराब, मछली की मिली जुली गंध बची रह गई। जिसे हम जल्दी से साफ कर देना चाहते थे।

यहाँ मैं पिताजी की मनोस्थिति का रेखाचित्र नहीं खीचूँगा, बस आपकी कल्पना के लिए छोड़ देता हूँ। सबके जाने के बाद मैं कमरे में कुछ देर तक पड़ा रहा। फिर जब नींद नहीं लगी तो किचेन में गया और सिगरेट लिया। सामने बोतल रखी हुई थी। उसे पहले एकटक देखता रहा। फिर उठा लिया और सब लेकर छत पर आ गया। सामने दिल्ली की दूर दूर तक चमकती हुई रोशनियाँ थी। मैं देर तक देखता रहा। और गिलास के साथ कश लेता रहा। अचानक आँखों में पानी उतर आया। उसमे सब चमक

धुँधलाने लगी थी। चाँद अब जर्द पड़ गया था। और उसका इस शहर में कुछ महत्व भी नहीं था। इतनी चमक दमक में वह बीमार सा दिख रहा था।

एक स्वप्न में यथार्थ की दरार

किसी भी किस्म के स्वप्न से लगातार मुझे डर लगता रहा। मैं हमेशा रात भर की एक लंबी और स्वप्नहीन नींद के पक्ष में रहा। मुझे जागती दुनिया हमेशा अच्छी लगी स्वप्न हमारे अवचेतन को दर्शाते थे। और अवचेतन एक ऐसा अँधेरा था जो लगातार मेरे यथार्थ का भयानुवाद करता रहा। जैसे बहुत सारी चीजें ऐसी आती रहीं जो रात की नींद हराम कर देती थीं। राजनीति का बहुत कमजोर विद्यार्थी होने के कारण सारे अधिकार और कर्तव्य भले याद न हो पाते थे या परिभाषाएँ एक में मिल जाती थीं पर अलग से मेरा सोचना यह था कि किसी भी नागरिक को कम से कम अच्छे स्वप्न देखने का अधिकार होना चाहिए था। और उसके लिए एक सुंदर संभाव्य यथार्थ। जैसे कि यह स्वप्न मेरे लिए किसी भयावहता से कम नहीं था कि मैं मिस मुस्कराहट से प्रेम करता हूँ। यह चीज तो थी। लेकिन बस अवचेतन का एक हिस्सा भर थी। इसकी ठोस यथार्थवादी शुरुआत एक दिन की घटना के बाद से शुरू हुई थी। फिर तो स्वप्न से यथार्थ और यथार्थ से स्वप्न की एक लंबी कड़ी ही शुरू हो गई।

पहले उस स्वप्न की एक बात जो भुलाए नही भूलती है और इस स्वप्न से सच कहूँ तो मुझे बहुत पहले सीख भी ले लेनी चाहिए थी। लेकिन मैं ऐसा नहीं कर सका था। उस रात मैंने देखा कि दोपहर का समय है और मैं और मिस मुस्कराहट दिल्ली की किसी माल में टहल रहे हैं। माल एकदम सूनी हवेली की तरह खाली है। सारी दुकानें सजी हुई हैं। पर दुकानदार कोई नहीं है। सिनेमा होल में फिल्में अपने आप चल रही हैं। सारे सिनेमा होल में मैं ही बैठा मिलता हूँ। सीढ़ियाँ यंत्रवत गतिमान है। मैं देखता हूँ कि मैं और मिस मुस्कराहट उस पर आ रहे हैं और जा रहे हैं। मुझे प्यास की तलब होती है। मैं सिनेमा होल के कार्नर में पानी खरीदने के लिए भागता हूँ। वहाँ कोई नहीं है वहाँ का दुकानदार मैं ही हूँ। मैं चौक जाता हूँ। वह जो मैं ही हूँ, नहीं चौकता है। मैं खुद से एक ग्राहक की तरह व्यवहार करता हूँ। मैं उससे पानी माँगता हूँ। वह एक बोतल पानी देता है। मैं उसे सौ की नोट देता हूँ। वह भीतर से किसी से छुट्टे की माँग करता है। मिस मुस्कराहट आती है। और वह चेंज मेरे हाथ पर रखती है। सिक्के जो की मेरी हथेली

पर हैं, देखते ही देखते बिच्छुओं में बदल जाते हैं। मैं झटक कर बाहर भागता हूँ। पानी की बोतल वहीं छूट जाती है। मैं बाहर आता हूँ और सड़कें सुनसान मिलती है। मैं घर की ओर भाग रहा हूँ। रास्ता भूल गया लगता हूँ।

एक गली में घुसता हूँ तो गली में गली और गली में गली मिलने लगती है। एक सघन अबूझ अंतर्जाल। मैं आँखें मूँदे भाग रहा हूँ। एक मोड़ पर कोई मरा सा पड़ा हुआ लेटा है। मैं उसे के निकट जाता हूँ। और जैसे ही उसका चेहरा देखने के लिए झुकता हूँ वह एक झटके में उठ खड़ा होता है। वह आदमी मैं ही हूँ। दाढ़ी खूब बढ़ी हुई है। और बरसों से जैसे नहाया नहीं हूँ। वह पीछे से मेरी गर्दन पर चाकू रख देता है। और जैसे ही दबाव बढ़ने लगता है मैं उसे झटक कर भागता हूँ। गली से आगे निकलते हुए मैं चार आदमियों को जाते हुए देख रहा हूँ। मैं जैसे ही आगे बढ़कर मुड़ कर देखता हूँ पाता हूँ कि वे मेरे ही चेहरे हैं। मुझे मेरा घर सामने दिख रहा है। मैं और जोर लगाकर भागता हूँ। घर का दरवाजा जैसे ही मैं खोलता हूँ वैसे ही मैं पाता हूँ कि मैं किसी भयावह खंडहर में पहुँच गया हूँ। यह खंडहर चीफ के आलीशान घर के हिस्से जैसा है। अचानक एक बड़ी सी गाड़ी में मुझे मिस मुस्कराहट मुझे दिखाई देती है। मैं चिल्लाता हूँ। मैं फिर चौक जाता हूँ। ड्रायवर की सीट पर मैं ही बैठा हूँ। वह धुल उड़ाते हुए मेरे सामने से गुजर जाती है। अचानक आगे जाकर किसी को कुचल देती है। मैं दौड़कर आगे बढ़ता हूँ। उस लहूलुहान व्यक्ति को उठाता हूँ। यह पिताजी हैं। और मेरी नींद खुल जाती है।

इतना सन्नाटा है कि घड़ी की टिक टिक साफ सुनाई दे रही है। मैं पसीने से तरबतर इस स्वप्न से इतना भयभीत हो गया हूँ कि कई सारे टुकड़े जैसे यथार्थ में लिथड़कर चले आए हैं। क्षणों के कई अंतराल खुद इस बात को समझाने में निकल जाते हैं कि नहीं यह कोरा स्वप्न है और यथार्थ से रिश्ता दूर दूर तक नहीं। मैं उठता हूँ और किचेन में जाता हूँ। एक गिलास पानी पीता हूँ। और फिर पिताजी के कमरे में जाता हूँ। पाता हूँ कि पिताजी के साँस लेने की आवाज गूँज रही है। यह मेरे लिए राहत की बात है।

उस दिन के बाद मैंने नोट किया था कि पिताजी की चुप्पी गहन से गहनतर होती गई थी। पहले तो वे घर पर ऑफिस के काम की कोई फाइल नहीं लाते थे। अब लाने लगे थे। रोजाना दफ्तर के अलावा वे अब दो घंटे शाम में काम करते थे। और बार बार

अपना चश्मा पोंछते जाते थे। हलवा रखा का रखा रह जाता था। बेहद थके से दिखते। तनावपूर्ण चेहरे जल्दी पहचान में आ जाते है। संख्याओं का एक मकड़जाल था जिसमें वे उलझे रहते थे। मुझे यह नहीं मालूम था कि पिताजी जोड़-घटाना में कैसा और कौन-सा सूत्र लगा रहे हैं। पूछने पर बताते कि किन्हीं सरकारी योजनाओं की फाइल थी। एक दिन मैंने देखा कि फाइल के कई बंडल वे घर ले आए हैं और पूरी आलमारी भर दी है। दिन रात फाइलों में उलझे रहने के कारण उनकी आँखों के नीचे काली लालिमा हो आई थी।

एक दिन मुझे एक फाइल देते हुए कहा कि इसे ले जाओ और चीफ के घर दे आओ। पहले तो मैं जाना नहीं चाहता था। लेकिन पिताजी का आदेश था इसलिए जाना पडा। चीफ के घर जाने के लिए एक बड़े से गेट और कुत्तों से होकर गुजरना था। घर में सबसे पहले भेंट मिस मुस्कराहट से ही हुई। मैंने कहा कि यह फाइल साहब को देनी है। उसने एक कमरे की ओर आवाज दी। डैडी! कोई फाइल लेकर आया है। चीफ निकले। वे शेविंग कर रहे थे। मुझे देखते ही उन्होंने बैठने के लिए कहा और मिस मुस्कराहट की ओर देखते हुए कहा कि इसे पानी वगैरह पिलवाओ... अपने करमचंद का बेटा है। मिस मुस्कराहट ने एक मुस्कराहट मेरी ओर फेंकी। 'आइए'। मैं एक शानदार गेस्ट रूम में बैठाया गया। और किसी को पानी पिलाने के लिए आदेशित कर दिया गया। मिस मुस्कराहट ने इस बीच मुझसे कई सारे सवाल पूछे। यह जानकार कि मैं राजनीति का विद्यार्थी हूँ, जोर से हँसने लगी। उसने कहा कि राजनीति कोई पढ़ने की चीज होती है। मैंने कहा कि और क्या! उसने जो कुछ बताया वह चौंकाने वाली बात लगी। उसने कहा कि राजनीति पढ़ने की नहीं, करने की चीज होती है। पढ़ने और पढ़ाने वाले लोग अमूमन राजनीति में भाग नहीं लेते हैं। उसने कहा कि दो चार दिन में उसके कोलेज में एक फंक्शन है... वह नाटक में भाग ले रही है और मुख्य भूमिका में है। और मुझे जरूर आना चाहिए। उसने यह भी कहा कि मैं चाहती हूँ कि तुम कोई उसमें रोल करो। मैंने वादा किया कि आऊँगा और भूमिका निर्वहन के बारे में सोच कर बताऊँगा।

नाटक शेक्सपियर का था। मैकबेथ। और प्रेतात्माओं की उपस्थिति में कुछ पात्र कम पड़ रहे थे। सो उसने कहने पर और कुछ मेरी रुचि भी थी। मैंने हामी भर दी थी। डेल्ही

कॉलेज के उस स्कूल का ऑडीटोरियम बेहद भव्य था। उसका कैंटीन और बन रहे उसमे पकवान, रुचिकर थे। वहाँ के टेबल और मेज पर चाय पी रहे लड़के और लड़कियाँ दुनिया जहान की बातें कर रहे थे। जिसमें सर्वाधिक उच्च सुर दुनिया को जल्दी से बदल देने के बारे में था। इसके सिवा बात बात में हँसी और मजाक से फूटते हुए गुब्बारे थे। मैंने वहा बैठकर बातें सुनी। वहाँ मेरे राजनीति विषय के ख्यातिलब्ध विद्वानों के अलावा भी कई महान कवि, दार्शनिकों, विचारकों, संगीतकारों और कलाकारों की बातों को कोट किया जा रहा था... मैं नहीं समझ पाता था कि इतने जहीन विचारों वाले विद्यार्थी आखिर कॉलेज से निकल कर कहाँ जाते हैं... अगर ये ऐसे ही विचारों से लैस होकर जब जाते हैं तो क्या वे सिस्टम का एक हिस्सा बन जाते हैं। क्योंकि जितना सुंदर इस कोलेज में उत्पन्न और चलायमान विचारधाराएँ थीं उतना ही कैंपस से बाहर का वातावरण दूषित था। हमारी नाटक की टीम अक्सर वहाँ बैठती थी। वहाँ हम (जिसमे मैं चुप ही रहता था) नाटक के संक्षिप्तीकरण से लेकर उसके बहुलतावादी अर्थों बहस करते थे।

नाटक का वह हिस्सा और दृश्य जहाँ मुझे आना है वहाँ एक लंबे टेबल पर मोमबत्तियों की जलती हुई श्रृखलाएँ रखी हुई हैं। कुछ ऐसा परिदृश्य तैयार किया गया है कि परदे पर खिंची आकृतियों का उतार चढ़ाव राजमहल की दीवारों जैसा लगा। और लेडी मैकबेथ की भव्य भूमिका में मिस मुस्कराहट को वहाँ से गुजरना है। लगभग अर्धनिद्रा में। कदम थोड़े से लड़खड़ाते हुए पड़ने थे। सारी पोशाक पाश्चात्य तरीके की हैं। मिस मुस्कराहट पहले से ही सादगी के ओज में ढाती रहती थीं। मेकअप के बाद तो वे और जानलेवा साबित होती थीं। होंठों के बाएँ सिरे पर अलग से कोई कृत्रिम तिल लगाने की कोई जरूरत नहीं थी। खुदा ने पहले से बक्श रखा था। जो किसी बुरी नजर की ताकत को त्वचा को छूने से पहले ही सोख लेता था। इस मोमबत्ती वाले हिस्से में लेडी मैकबेथ को लहरा कर चलना था। जिससे मंच के ऊपर हिसाब किताब से प्रकाश और अँधेरे का एक जुगलबंदी चल सके। और ठीक उसी समय मेरी उपस्थिति होनी थी।

लेकिन रिहर्सल की एक दुर्घटना ने मुझे मिस मुस्कराहट के और करीब कर दिया था। लेकिन इस दरमियाँ मैं मैकबेथ की भूमिका वाले लड़के का परिचय देना भूल ही रहा हूँ

जो इस कहानी में केंद्रीय हस्तक्षेप की तरह मौजूद था और हमेशा आईपोड कान में लगाए घुमता था उसके पास किसिम किसिम के आईपोड थे। और उनमे भरा था एक रॉक संगीत। मैंने उसका जिक्र पहले ही किया था। यह वही लड़का था जिसे उस दिन मिस मुस्कराहट ने अपने कान से निकालकर आईपोड दिया था। बाद में पता चला कि इसका नाम ही आईपोड था। यह उनके कॉलेज के दोस्तों का दिया हुआ एक निक नाम था। आईपोड के बाल लंबे और घुँघराले थे। उसके चचा विधायक थे। आईपोड के चाचा और चीफ का जो रिश्ता था। वह व्यापारिक था। इस तरह से मिस मुस्कराहट और आईपोड के नजदीक आने के हजार कारण बनते थे। मेरा एक कारण था प्रेम जो शायद अभी तक मेरी समझ से भी बाहर था, वह इन कारणों के बरक्स कितना टिक पाएगा मैं नहीं बता सकता।

लेकिन एक वजह जो देखा जाए तो मिस मुस्कराहट मेरे नजदीक आई थी। उस दिन हुआ क्या था कि रिहर्सल में शाम हो आई थी। मैकबेथ अपनी तलवार चलाने की बारीकी और हुनर सीखने में मगन था। और इधर लेडी मैकबेथ का रिहर्सल उन जल रही मोमबत्तियों के बीच से होना था। मंच पर भरपूर अँधेरा था। परदे के बीच से कई आवर्तन में घुमकर लेडी मैकबेथ को अपनी पोशाक के लहराव से मोमबत्तियों के प्रकाश को अँधेरे की ओर एक खास दिशा देनी थी। और यह कई बार करना था। इन्हीं के बीच समयों में मुझे दूसरे परदे की आड़ से चुड़ैलों के साथ निकलना था। और संवाद के बीच अपनी क्रियात्मक उपस्थिति जिंदा रखनी थी। हुआ यह था कि उस खास एक्ट को करते वक्त मिस मुस्कराहट की पोशाक ने आग पकड़ ली थी। मिस मुस्कराहट चीखने लगी। इससे पहले कि वे बदहवास होकर भागें और आग अपनी रवानी पर हो मैंने उन्हें पकड़ कर जमीन पर लिटा दिया था। और साथ में लुढ़कते हुए बहुत दूर तक चला गया। यह एकदम फिल्मी दृश्य था।

यही से मुस्कराहट का लगाव मेरी ओर हुआ होगा। पहले कुछ खास नहीं थी लेकिन अब मेरे प्रति उसके व्यवहार में एक विशेष नरमी आ गई थी। इस दुर्घटना से हदसकर निर्देशक ने इसे हटाने का फैसला कर लिया था। जब बात मुस्कराहट तक आई तो इस फैसले को नकार गई। उसने कहा कि यह दृश्य खास है नहीं हटेगा। मैं करूँगी। संयोग

से मैं वहीं था और ऐसा कहकर उसने मेरे कंधे पर हाथ धर दिया था। यह सुखद अनुभूति थी।

उस रात इस सुखद आधार पर मुझे जो सपने आने चाहिए थे वे कम से कम इतने डरावने तो नहीं होने चाहिए थे। जब रात में आया तो पिताजी फाइलों में डूबे हुए थे। उन्होंने इस संबंध में कुछ कहा तो नहीं था पर जहाँ तक मैं समझता हूँ उन्हें यह जानकर कि मैं नाटक में काम कर रहा हूँ (भले प्रेत का!)अच्छा ही लगा होगा। कम से कम दिन रात इधर उधर घूमने से तो अच्छा ही था। थोड़ा कमजोर दिखने लगे थे वे इन दिनों। मैंने कहा कि फाइलों में वे ऐसा क्या करते हैं अगर समझा देंगे तो मैं भी मदद कर दिया करूँगा। तुम्हारे वश का नहीं कहकर वे दूसरी फाइल चेक करने लगते थे।

उस रात मैंने एक स्वप्न देखा जिसका संबंध शायद यथार्थ से तो नहीं ही था। मैंने देखा कि मैं प्रेत हूँ। सचमुच का। जिसकी त्वचा उधड़ चुकी है। और यहाँ वहाँ हर जगह से रिसाव हो रहा है। मिस मुस्कराहट जो सचमुच लेडी मैकबेथ हैं। और मैकबेथ सचमुच मैकबेथ है। वे अपने राजमहल में सो रहे हैं। राजमहल में आग लगी हुई है। मैं दौड़ता हूँ... और सीढ़ियाँ चढ़ता हूँ। और वहाँ पहुँचता हूँ जहाँ मैकबेथ और लेडी मैकबेथ प्रणय प्रसंग के नाजुक चरण में हैं। मैं खिड़कियों पर से होकर चिल्लाता हूँ। वे मेरी और देखते हैं। मुझ पर हँसते हुए। मैं अपनी दशा पर तरस खा रहा हूँ। क्या मेरी नियति ही प्रेत होना है। जिसपर वे दोनों हँस रहे हैं। मैं फिर सीढ़ियों से उतर कर सड़क पर आ जाता हूँ। इस बार मैं जब राजमहल की ओर पलट कर देखता हूँ तो पाता हूँ कि वहाँ अब मेरा घर है मैं दौड़कर ऊपर जाता हूँ और पाता हूँ एक कमरे में पिताजी अपनी फाइलों में खोए हुए हैं। मैं चिल्ला रहा हूँ कि पिताजी भागिए। ...आग आग आग !!! लेकिन जैसे वे सुनते ही नहीं हैं। और अपनी धुन में फाइलों में गुम हैं। आग उनके मेज तक पहुँच गई है। वे उसे जैसे देख ही नहीं पा रहे हैं। वह उनके कपड़ों को पकड़ चुकी है। फिर भी वे उसी तरह फाइलों में मगन हैं। तभी मेरी नींद टूट जाती है। वही वैसा ही भयावह सपना! इसके बाद मैं लगातार सोने का प्रयास करता हूँ पर सो नहीं पाता हूँ। क्या है ये सब! मेरे डर का क्या कारण है। कितने परतों में वह दबा हुआ है। रात भर

सोचने के बाद भी मैं समझ नहीं पाता हूँ। बिलकुल भोर में मुझे टूटकर नींद आती है और मैं धूप के चढ़ जाने तक सोता हूँ।

खैर! उस दिन अचानक हुई बारिश की वजह से रिहर्सल रद्द करनी पड़ी थी। और फिल्म देखने का प्रोग्राम बन आया था। ठंडी हवा और झकोरों के बीच यह मस्ताना आइडिया था। हम शहर के महँगे मल्टीप्लेक्स में गए। यह मल्टीप्लेक्स बीते सालों झुग्गी झोपड़ियों को हटा कर बनाया गया था। अब इसके चमक दमक में उन झोपड़ियों की याद भी नहीं आती है। उनकी कब्रें बहुत नीचे होंगी। घुसने के गेट पर एक चौकीदार, जो बुझे हुए चेहरे के साथ एकदम निर्वासित और कई रातों से सोया नहीं लगता था, वह झुककर सबको सलाम करता था। हमारी टीम ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। हमारी टीम की तो छोड़िये, शायद ही कोई उस ओर ध्यान देता हो। वह चौकीदार किसी परछाईं मात्र के आभास से झुक जाता था। अगर ठीक से पड़ताल की जाए तो यह उसी झुग्गियों से निकला हुआ आदमी होगा। बाजार में गुलाम बनाने के अनंत तरीके थे। यह आदमी भी उसी तंत्र और तरीके का मारा हुआ लगता था।

एकबारगी मुझे लगा कि मेरा देखा गया सपना सच होगा। मसलन मैं हर सिनेमा होल में मिलूँगा। लेकिन ऐसा रत्ती भर भी नहीं हुआ। मैंने चैन की साँस ली। हमने एक ताजा मूवी का टिकट लिया। उस वक्त मौजूदा सिनेमा भी हमारे ख्यालों और तंत्र की तरह अपंग था। ऐसे सिनेमा देखने की जगह अगर हम जमकर एक नींद सो लें तो ज्यादा सेहतमंद साबित लगता था। मिस मुस्कराहट जो की मेरी बगल की सीट पर बैठी थी, ने हाथ आगे बढ़ाकर चिकोटी काटी। मैं नींद से जग गया। वह हँसी और कहा कि सोने के लिए आए हो। मैंने कहा कि ऐसे सिनेमा देखने से तो अच्छा है कि मैं मर जाऊँ। वह हँसी फिर। ...तो क्या करोगे। यह सही वक्त था कहने के लिए और मैंने कह दिया कि इससे तो अच्छा है कि मैं तुम्हें ही देखता रहूँ। ...देखता रहूँ क्या? इस तरह मैं सो नहीं पाऊँगा। वह जोर से हँसी पर उसकी हँसी परदे पर चल रही गोलियों के बीच दब कर रह गई। देखते रहो कहकर वह फिर मारधाड़ में गुम हो गई। मैं अँधेरे में उसे देखता रहा। बीच सिनेमा में कई बार उसने मुझे देखते हुए देखा। उस अँधेरे में उसकी आँखें मछली की तरह चमक जाती थीं।

रात में हम एक लंबी ड्राइविंग पर थे। दिल कितने भी गंदे रहे हों, लेकिन देलही की सड़कें साफ और चौड़ी थीं। आईपोड अहलुवालिया स्टेयरिंग पर से हाथ छोड़कर अपने आईपोड पर गाने सलेक्ट करने लगता था। सामने कई जगह फुटपाथ पर गरीब बेघर लोग सोए थे। बस एक चूक से मौत हो सकती थी। मुझे अचानक याद आई उस दरबान की, जिसने मल्टीप्लेक्स में घुसते हुए गेट खोला था। फिर लगा कि जैसे वह कोई और नहीं मैं ही था। फिर उन झोपड़ियों के लोगों की याद आई जिन्हें जबरन बेघर कर दिया गया था। क्या वे सब ही फुटपाथ पर थे? फिर अचानक मुझे लगा कि अगर दो कमरों के उस सरकारी मकान को छोड़ दिया जाए तो मेरा यहाँ क्या है? एक बित्ते भर की भी तो जमीन नहीं है। पिताजी तो एक पैसे घूस में लेते नहीं। और मैं सौ फीसद आवारा और नकारा। गाँव में भी क्या रखा है? दो कमरों का मकान। जिसकी ढहती हुई दीवार किसी दुःस्वप्न से से कम नहीं। क्या है मेरे पास जिसके बल पर मैं कहूँ कि मैं सुंदर स्वप्न और यथार्थ के बीच रहने वाला इस देश का नागरिक हूँ? न तो मेरे पास इन धनाढ्यों जैसे मेल मिलाप करके घोटाले करके करोड़ों की संपत्ति है और न ही हजारों बीघे खेत है। फिर भी मेरी स्थिति तो इनसे कई गुना अच्छी है। कम से कम दो वक्त की शानदार रोटी है। हलवा है। अल्लसुबह सिगरेट है। माँ पिताजी है। किराया या सरकारी ही सही, दो कमरे का घर है। और मेरा पेट भी इतना भरा है कि कम से कम एक अदद प्रेम को अफोर्ड करने की औकात भले न हो। उसके बारे में सोच तो सकता है। लेकिन क्या यही सब कुछ है? क्या मुझे घर जाकर चादर तानकर सो जाना चाहिए? फिलहाल तो अफसोस कि मैं यही कर रहा हूँ।

घर पहुँचा तो पिताजी फाइलों के बीच सोते हुए मिले। मैंने उन्हें जगाया और कमरे में जाकर सोने के लिए कहा। बत्ती बंद कर दी। रात और गहराती गई। इस अमावस की रात में डेल्ही और चमक रही होगी। फिलहाल उसे देखने की कोई तमन्ना नहीं बची है। और आगे जो कुछ हुआ उसमें सपने और यथार्थ इतने घुल मिल गए थे कि उसे अलगाना मेरे वश की बात नहीं रह गई थी।

दुःस्वप्न

जैसे कि यह जो हुआ था सपने की तरह लग रहा था। मैं कई दिन उस रिहर्सल में जाता रहा। चूँकि मैं उस कोलेज का विद्यार्थी नहीं था इसलिए नियमतः रोल मिलना

मुश्किल-सा था। लेकिन करना चाहो तो सब एडजस्ट हो जाता है। और वैसे भी मैं उस टीम में कौन सा विशेष महत्वपूर्ण था। मेरा चेहरा तक पहचान में मुश्किल था। मेरी पूरी बनावट ही प्रेत के नजदीक थी। एक शाम की मैं बात बताने जा रहा हूँ। नाटक की निर्धारित तारीख नजदीक थी। और हम जोरों से मेहनत कर रहे थे। रिहर्सल की उस शाम हुआ यह था कि निर्देशक पहुँचा नहीं था। कहीं ट्रैफिक में फँसा था। उसने कहा था कि तुम लोग तैयार रहो। जल्दी ही मैं पहुँचता हूँ। मैंने अपना मेक अप कर रखा था। और मिस मुस्कराहट भी पूरे धज के साथ तैयार थी। वह एक ऐसी शाम थी जिससे देह की सारी नसें और तंत्रिका तंत्र शिथिल पड़ जाती है। और मन एक अलहदा दार्शनिक ख्यालों में उड़ने लगता है। हम बाते करते हुए फाइन आर्ट की गैलरियों की ओर चले गए थे। वहाँ एक एकांत से दिखते बेंच पर बैठ गए। मिस मुस्कराहट की ओर मैं देखता रहा। वह क्षण ही एक विशेष क्षण था जब मुस्कराहट ने मेरी आँखों में आँखें डालकर पूछा था कि तुम सारी उम्र मुझे इसी तरह देखना चाहते हो ना! इस अप्रत्याशित सवाल से मैं एकदम चौंक गया था। मैंने पूछा कि किस तरह। तो वह बोली ऐसे ही जैसे देखते रहते हो। सच कहूँ तो मैं उस वक्त उससे बहुत कुछ कहना चाहता था लेकिन पता नहीं क्यों गले ने जवाब दे दिया। फिर बोली जानते हो तुम सबमें बहुत अलहदा लगते हो। पूरी टीम में तुम ऐसे हो जिस पर... आँख मूँद कर खुद को तुम्हारे भरोसे छोड़ सकती हूँ। फिर कुछ देर तक वह चुप बैठी रही। सामने हरे मैदान में लैंपपोस्ट के रोशनी में चमकता एक स्कल्पचर था। लैंपपोस्ट की सारी रोशनी उस पाषाण युवती के उभारों पर चमक बन कर उतर रही थी। मैंने अपनी पूरी ताकत जुटाकर कहना चाहा कि तुम्हारे होंठों के ऊपर का तिल कितना प्यारा है। लेकिन नहीं कह पाया था। और वह जाने कैसे इस बात जान गई। तुम मेरा तिल देखते रहते हो न! मैं चौक गया। हाँ! यह मुँह से अनायास निकल गया था। वह हँसने लगी। तुम्हे कैसे पता? बस पता है। वह मेरी ओर इस तरह से देखने लगी जैसे कोई प्रेम में डूबकर किसी ओर देखता है। और आगे जो कुछ हल्का सा हुआ उसमें अगर दोष कहीं से था तो वह प्रकृति का है। मैं उसके और नजदीक पहलू में सिमट आया था। और होंठों के ऊपर के तिल को छू रहा था। उसके बेहद पतले और मुलायम होंठों को छू रहा था। मुस्कराहट की आँखें इस तरह से हो गई थी जैसे अपने ही अंदर कहीं कुछ मुलायम सा देख रही हों। हमारे इर्द गिर्द एक पीली सी स्वप्नमयी रोशनी गिर रही थी।

अगर दूर से कोई देखता तो लगता कि किसी सपने में एक प्रेत के चंगुल में एक परी है। इसके पहले कि कोई अदृश्य सी इच्छा हमें हाथ पकड़कर और आगे ले जाता गैलरी में कोई पात्र हमें पुकारता हुआ चला आ रहा था। निर्देशक आ गया था।

जैसा मैं सोच रहा था या आप सोच रहे हैं वैसा रत्ती भर नहीं था। और होता तो ग़ालिब के एक लय की तरह मैं खुशी से मर नहीं जाता। एक दिन की घटना और हुई जिससे मुझे लगा था कि मिस मुस्कराहट के अंदर कुछ लगाव मेरे लिए है। मैं ठीक से नहीं बता सकता पर यह एक सपने की तरह घटित हुआ था। एक सुबह जब मैं सोकर उठा ही था तो मुस्कराहट घर चली आई थी। और चुपके से अम्मा के साथ किचेन में लग गई। अम्मा मना करते रह गई। वह मेरी किताबें देखती रही। बगल में कई सारी फाइल पड़ी हुई थी। उसने अपना महँगा हैंड बैग उतार कर रख दिया था। जो मेरी साधारण सी मेज पर और असाधारण लग रहा था। वह चाय और ब्रेड लेकर मेरे साथ छत पर आ गई। बेहद भीगी सी सुबह में उसके साथ होना मुझे अतिशय सुहाना लगा। इतनी देर तक सोते रहते हो। मैंने हाँ कहा। सामने उस रात की पी गई खाली बोतल पड़ी हुई थी। पापा पीते हैं क्या? ऐसा कहने पर मैंने कहा कि नहीं! उस दिन जब पार्टी सी थी तब की यह बोतल है। वह बोतल पूरे आभा में सूरज की रोशनी को अपने कब्जे में कर मेरे आँखों में भेज रही थी। उस रोज छत पर एक और वाकया हुआ था। मैं मिस मुस्कराहट का हाथ पकड़ कर एक कोने में खींच ले गया। और मैंने पूरी हिम्मत जुटाकर उससे कहा कि मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। फिर चूम लिया। पहले तो वह हँसी फिर कहा कि अभी तक नींद में ही हो। जाओ सो जाओ। मैंने कहा कि नहीं मैं बिलकुल नींद में नहीं हूँ। और मैंने वह बोतल उठाई और नीचे फेंक दी थी। एक खनाक से वह सड़क पर छितरा गई।

पिताजी का दिन रात काम करना उनके सेहत के लिए घातक था। लगातार फाइलों में डूबे रहने से वे किसी निर्बल जीव की तरह दयनीय लगने लगे थे। और एक दिन बीमार पड़ गए। मैंने उनकी सहायता के लिए कुछ सूत्रों को रटकर हाथ बटाने लगा था। मैंने उन्हें सही करता जा रहा था। और पिताजी साइन करते जा रहे थे। वे बिस्तर पर पड़े हुए हिसाब किताब बताते जाते थे और मैं उन्हें सही करता जा रहा था। फाइलों में कई सारी गड़बड़ियाँ थीं। एक अलग से कोई फाइल उन्होंने बना रखी थी। जिससे

मिलान करना था और सही करते जाना था। बहुत सारे आँकड़े बढ़ा चढ़ा कर लिखे गए थे। जैसे अगर किसी प्रोजेक्ट में पचास लाख रुपये की वास्तविक लागत थी। तो उसे इस तरह की धोखेबाजी से समायोजित किया गया था कि वह एक करोड़ की पूँजी प्रदर्शित करता था। यह कुछ ऐसे था कि अगर हम एक नदी पर एक पुल दिखा रहे हैं तो वास्तविक अर्थों में वह दिखता हुआ पूरा पूल, आधा पुल ही था। या था ही नहीं। या कोई दस करोड़ की सड़क है तो उसे तीन बार तीन योजनाओं में बस कागज पर दौड़ा दिया गया है। जबकि वह सड़क अपने पुराने जर्जर हालत में है। चुनाव नजदीक आने थे। और चुनावी गणित और अन्य चालों के तहत पिताजी के विभाग पर केंद्रीय जाँच लगा दी गई थी। पिताजी ने यह बताया कि यह सारी जाँच केवल इसलिए हो रही है कि चीफ ने वह कमीशन का वह हिस्सा उस मंत्री को भेजने से इनकार कर दिया था जिसे हमारा धोखेबाज तंत्र योजना बनाने से पहले ही निर्धारित कर लेती है। पहले भेजा जाता रहा। पर आईपोड अहलुवालिया के विधायक चाचा ने इसमें हस्तक्षेप कर दिया था। और कहा था कि वह निर्धारित कमीशन मत दो। वह सब सँभाल लेगा। और अंत में नहीं सँभाल पाया। उस मंत्री ने शासन से कहकर एक जाँच बिठवा दी थी। और मिथक आँकड़े तो यह बताते है कि जो यह केंद्रीय जाँच है, वह सत्ता की रखैल है। इसका प्रयोग वह अपने अपने विशेष चुनावी प्रयोजन साधने के लिए करती रही है। खैर! जो भी बात रही हो, यह सब फाइल पिताजी के मेज पर कई दिनों से साइन के लिए पड़ी हुई थी। जिसे उन्होंने इनकार कर दिया था। पहले तो चीफ कई दिन तक पिताजी को अपना हिस्सा लेने के किए समझाता रहा। और सही फाइल का हिसाब लेने से वह इसलिए नकारता रहा कि हो सकता है कभी किसी दिन उनका हृदय परिवर्तन हो जाए। और उसे ऊपर से भी बचना था। लेकिन ऐसा नहीं होना था। अब जब जाँच आई तो काम का दबाव बढ़ गया था। अब पिताजी को सब सही सही करना था। नहीं तो वे इस मामले में फँस जाते। मैं भी पिताजी के निर्देशन में दिन रात एक करके सारे आँकड़े दुरुस्त करने लगा था।

लेकिन इसी बीच मैकबेथ का वह नाटक भी होना था। वह नियोन और कई किस्म की रंगीन प्रकश में डूबी हरी घास पर एक चमकती रात थी। कॉलेज का मंच बेहद आलीशान था। मेकअप रूम के लिए अलग अलग कमरे थे। और सभी टीम को मिले थे। मुझे कुछ करना नहीं था। सभी लोग अपने अपने मेकअप में यहाँ वहाँ जा रहे थे।

मैदान में टहल रहे थे। मैं भी टहलता हुआ मैदान से थोड़ा और आगे आ गया। वहाँ एक झाड़ी थी। झाड़ी में मैंने हलचल देखी थी और जो देखा उससे मैं पूरी तरह हिल गया था। वहाँ मिस मुस्कराहट आईपोड अहलुवालिया के साथ थी। और ऐसी हालत में थी जो हर लिहाज से आपत्तिजनक थी। सामने एक बेंच था। उस बेंच पर शराब की एक बोतल रखी हुई है। और बगल में अधपीया हुआ सुलगता सिगरेट पड़ा है। इसके पहले वे मुझे देखते मैं मंच की ओर लौट आया। लगभग बदहवास। अभी अभी कोई एक्ट पूरा हुआ था। और सभी दर्शक अतिउत्साह में तालियाँ और सीटियाँ बजा रहे थे। मैं आया और सीधे मेकअप रूम में बैठ गया। वहाँ मन नहीं लगा। मैं सीधे घर की ओर भागता हूँ। अम्मा दरवाजा खोलती हैं तो चीखकर एक ओर हो जाती हैं। मैं हूँ अम्मा। ...मैं! आवाज पहचान कर कहती हैं कि तू तो नाटक में गया था न! मैं कोई जवाब नहीं देता और सीधे कमरे में लौट जाता हूँ। पिताजी देखते हैं तो चौंककर खड़े हो जाते हैं। फिर ध्यान से देखकर कहते हैं कि क्या बना था तू? प्रेत! प्रेत बना था मैं! फिर लगता है कि इस दुनिया में सचमुच मेरी स्थिति प्रेत की ही है। यहाँ सब उसी स्थिति में है। एक ऐसा जीवन जी रहे हैं हम जिसकी बहुत पहले हत्या कर दी गई है। एक मृतप्राय जीवन!

मैं सोता हूँ तो यह सोचकर सोता हूँ कि अब मेरी नींद कभी न खुले। मैं कोई सुबह नहीं देखना नहीं चाहता हूँ। मुझमें अब वह हौसला ही नहीं रह गया है। लेकिन ऐसा कहाँ होता है! सुबह मेरी नींद पिताजी की आवाज से खुलती है। वे कोई फाइल ढूँढ़ रहे हैं। मैं उनकी आवाज कान से पहले ही रोकर नींद में और अंदर धँस जाना चाहता हूँ। वहीं होगी आलमारी में! कहकर मैं दूसरी करवट बदल लेता हूँ। अरे उठो! फाइल नहीं मिल रही है। इस बार उनकी आवाज का तंज भाँपकर मैं उठता हूँ। तो वे बताते हैं कि फलाँ फलाँ नंबर की कई सारी महत्वपूर्ण फाइलें गुम हैं। उठकर मैं देखता हूँ। सचमुच आलमारी में फाइलें नहीं मिलती। हम सभी बदहवास होकर बाथरूम, किचेन से लेकर चारपाई के चादर और परदे तक झाड़कर देख लेते हैं। पिताजी कहते है कि वे फाइलें बेहद जरूरी हैं। आज जाँच समिति के सामने पेश करना है। वे बहुत निराश होकर टेबल पर बैठ जाते हैं।

मैं आलमारी के पास फिर से फाइलों के बीच जाता हूँ। हर फाइल उठाकर बारीकी से सूँघता हूँ और पाता हूँ कि इसमे मुस्कराहट की एक विशेष किस्म इत्र की एक बेहद हलकी गंध बसी हुई है। यह गंध अरब अमीरात से आयातित किसी खास इतर की है। जिसे कम से कम हमारे परिवार की यह समकालीन पीढ़ी वहन नहीं कर सकती है। मैं धम्म से बैठ जाता हूँ। इतना बड़ा धोखा!

केंद्रीय जाँच संगठन की जाँच समिति ने पिताजी के इस घपले के लिए थाने में एफ आई आर दर्ज की। और अगली सुबह हम सड़क के चौराहे पर आ गए। पिताजी को बुरी तरह से फँसाया जा चुका है। चीफ ने यह कहकर कि वह सब संबंधित फाइल पिताजी ने उन्हें दी ही नहीं है। और वह जाने कब से माँग रहा है। जिसे वह साइन करके आगे शासन की ओर अग्रसारित करता। कुल मिलाकर ठीकरा पिताजी के माथे पर फूटना था, और फूटा। सरकारी घर हमसे छिन गया था। हमने अपने घर, अपने गाँव की जाने की तैयारी बना ली थी। पिताजी को संबंधित घोटालों से पूछताछ के लिए वहीं रोक लिया गया था। उनके खाते सीज कर दिए गए। उसमें मात्र दस हजार चार सौ सैंतीस रुपये थे। गाँव आने के लिए पैसे उधार माँगने पड़े।

एक दिन जब मैं सामान बाँधने के लिए रस्सी खरीदने जा रहा था तो मिस मुस्कराहट से मुलाकात हो गई। मैंने उसे बुलाया तो उसने पहचानने से इनकार कर दिया। फिर जब मैंने सारी बातें तफसील से बताई तो उसने कहा की अच्छा तो तुम उस घोटालों वाले उस फलाँ बाप के बेटे हो। मेरे जबड़े तन गए। मन किया कि वही उसे जमीन में दफन कर दूँ। जब मैंने कहा कि तुम मेरे घर आई थी और सब फाइल चुराकर गई हो। तो दाँत पीसकर उसने अंग्रेजी में कोई गाली दी। मैंने कहा कि मैंने तुम्हारे साथ नाटक में काम किया था। भूल गई। तो उसने कहा कि कौन से नाटक में! मैंने कहा कि उस दिन तुम छत पर थी मेरे साथ। और मैंने तुम्हारे बाप की पार्टी में पी गई बोतल को उठाकर छत से फेंका था। और तुम्हें चूमा भी था। उसका पारा सातवें आसमान पर पहुँच गया। उसने कहा कि कमीने मेरी नजरों से हट जाओ! नहीं तो यही चिल्लाकर तुम्हारी दुर्गति करवा दूँगी। तुम्हारी क्या औकात क्या है? एक मामूली क्लर्क के बेटे हो और सपने इतने ऊँचे पालते हो। मुझे ऐसे ही किसी जवाब का अंदाज पहले से था। जिसका आभास उस सपने से मुझे हो गया था। लेकिन इतना तगड़ा और धूलपकड़

जवाब होगा, नहीं सोचा था। इतने के बाद तो मैं यह भी जान गया था कि जब यह नहीं पहचान रही है तो इसके दोस्त सब क्या पहचानेगें? लेकिन यकीनन उसका घर आना कोई सपना नहीं था। हाथ से छुआ और आँख से देखी गई बातें थीं। लेकिन एक घटित यथार्थ को बुरे सपने में बदल दिया गया था। और एक हो रही साजिश को सपने में से निकालकर यथार्थ में ला दिया गया था। मैं उस दिन मैं अपने दिमागी संजाल में उलझ गया। तो क्या जो सब हुआ था एक स्वप्न था। और जो मैं जीवन जी रहा हूँ, वह बस नींद भर है। शायद हो। और हो जाए तो कितना सब कुछ आसान हो जाएगा। कि एकदम सुबह नींद खुले और पता चले कि हम गाँव में है।

पिताजी की नौकरी बस एक सुखद स्वप्न की तरह झूठ है। और डेल्ही नाम का शहर बस नींद में कभी था। सच में था ही नहीं या फिर है ही नहीं। और अम्मा जिन्हें शहर के नाम से ही रक्तचाप बढ़ जाता है, वे कभी गई ही नहीं। और सवेरे सवेरे आँगन में झाड़ू लगा रही हैं। और पिताजी को चाय पीने के लिए बाहर आवाज दे रही हैं। लेकिन ऐसा कैसे हो सकता है! मैं इस सुखद स्वप्न में घुस जाने के लिए जैसे सड़क पर भाग रहा हूँ। लेकिन उस दृश्य में नहीं घुस पा रहा हूँ। और रात है कि इतनी लंबी है कि उसमे दिन भी होने लगे हैं। और मैं उसी दिन में साँस ले रहा हूँ। मैंने पान वाली दुकान से सिगरेट का पैकेट लिया और छत पर जाकर पीने लगा था। मैंने देखा कि वहाँ कोने में वह बोतल पड़ी थी जिसे मैंने उठाकर नीचे फेंक दिया था। तो क्या वह छनाक की ध्वनि बस सपने से निकल कर आई थी। लेकिन नहीं एक मिनट! मैंने ध्यान से देखा उसकी तली में थोड़ी सी शराब बची थी। उस दिन मुझे याद है कि मैं शराब की एक एक बूँद चाट गया था। लेकिन याद का क्या भरोसा! वह भी मुझ जैसे आदमी पर, जो सपने और यथार्थ के बीच किसी जर्जर कड़ी की तरह अटक गया हो।

पिताजी को पूछताछ के लिए उठा लिया गया था। कुछ क्षणों को छोड़ दिया जाए तो हमसे मिलने नहीं दिया गया था। हमारी वहाँ कोई पकड़ नहीं थी जिससे हम कोई फरियाद करते। पिताजी ने कहा कि वे निर्दोष हैं और देर सवेर लाख साजिशों के बावजूद वे पाक साफ घोषित होंगें। और जल्दी गाँव आ जाएँगें। पिताजी का चेहरा बहुत धुँधला और बीमार था। उन्होंने हमें जल्दी अगली सुबह ट्रेन पकड़ लेने के लिए कहा था। माँ और मैं उस चमकती दुनिया में असहाय, लाचार और विक्षिप्त से लग रहे

थें। जब हमारी ट्रेन उन विस्थापितों की झुग्गी झोपड़ियों से होकर गुजर रही थी जो इस तंत्र में अपाहिजों की तरह अपना जीवन घिसट घिसट कर ढो रहे थें, तो माँ के साथ साथ मुझे भी बेतरह रोना आ रहा था। और ठीक ठीक देखा जाए तो हम भी कहीं न कहीं से उनका एक हिस्सा बन चुके थें। इस यात्रा में गर पिताजी साथ रहे होते तो सच में मैं इस बीते चुके जीवन को कोई दुःस्वप्न मानकर भूल गया होता।

गाँव में पहले से हल्ला था कि करमचंद जैसे बेहद ईमानदार आदमी को जान-बूझकर फँसाया गया था। पिताजी के शरीफ व्यक्तित्व का दबदबा कुछ ऐसा था कि अगर हमारे एक्के दुक्के दुश्मन भी कहीं होंगे तो उन्हें भी विश्वास नहीं होता। और एक किस्म की सहानुभूति उपजती। यह वही वक्त था जब जिला पंचायत के चुनाव नजदीक आ रहे थे। मैं कई महीनों तक घर ऐसे ही उदास बैठा रहा। आने वाले आते रहे और हाल चाल पूछते रहे। कुछ भी हो पिताजी की इलाके में छाप थी। कुछ सूत्रों से मालूम चला कि इस बार चैयरमैन की सीट आरक्षित होने वाली है। एक रात जब मैं सोने जा रहा था तो एक सपना देखा। वह यह था कि सैकड़ों-हजारों की भीड़ हमारे पीछे चल रही है। हमारे नाम की जय जय करते हुए। पिताजी को लोगों ने माला पहना कर अपने कंधों पर बैठा रखा है वे जिला मुख्यालय के अंदर जा रहे हैं और सामने की लगी हुई कुर्सी पर बैठ गए हैं। लोग मुझे बधाई और मिठाई दे रहे हैं। जब मैं जगा तो रात बस शुरू हुई थी। और अम्मा पशुओं को तबेले में बाँधकर दूध की हाँडी बोरसी पर से उतार रही थीं। मैंने उन्हें बुलाया और इस सुखद सपने की बाबत बात की। मैंने उन्हें यह बात बताई कि जीतने की संभावना बहुत है। और लड़ाई भी सीट आरक्षित होने की वजह से और माफियाओं, दलालों और बदमाशों के प्रत्यक्षतः न लड़ने से थोड़ी आसान है। और एक तरह से यह मेरा सपना भी तो है।

माँ मान गई। और चुनाव में मैंने अम्मा के नाम से पर्चा भर दिया था। चुनाव में पैसे लगने जरूर थे पर मेरे नहीं लगे। दारू और मुर्गा की माँग हम लोगों की दयनीय स्थिति की वजह से नहीं हुई थी। हमारे विपक्ष में भी क्षेत्र के माफियाओं ने अपने कैंडिडेट खड़े किए थे। जो कि हमारे बरक्स यानी कि पिताजी के नाम के बरक्स काफी कमजोर निकले थे। और कुछ तो रुपये पैसों और पहुँच से हमारी भी मदद करने को तैयार थे। मैंने खुद मना कर दिया था। इस सीट को हम निकाल लेने वाले थे। हमने

गाँव गाँव घूमकर रात्रि सभा की। और पिताजी के मामले में पर्याप्त सहानुभूति हासिल की। गाँव वालों ने साथ भरपूर दिया था। और कहा जाए तो हमारे वार्ड में सभी ने साथ दिया। हम भारी बहुमत से जीते थे। अब बारी चैयरमैन की दावेदारी की थी। जिसमे हमने जी जान लगा दिया था। कुल तीन सीट हमारे प्रतिपक्ष में थी। और वे भी चैयरमैन की इस आरक्षित सीट पर दावेदारी करने वाले थे। और इन्हें मनाना आसान नहीं था। जब हम जीते थे तब इस अपार सफलता से प्रभावित होकर जिले के वर्तमान चैयरमैन और माफिया जगदंबा चौधरी हमसे मिलने आए थे। और उन्होंने बताया कि पिताजी और वे माध्यमिक स्कूल में सहपाठी थे।

पिताजी के साथ जो भी हुआ था उसे सुनकर उन्होंने कहा कि यह सरासर अन्याय है। और देर सबेर सत्य की जीत होगी। जो भी जरूरत होगी उनसे बिना संकोच के मिल लें। उस दिन अगर इस आदमी ने हस्तक्षेप नहीं किया होता तो हम शायद चैयरमैन का चुनाव हार गए होते। उसने हमारे विरोध में आने वाली हर आवाज को दबा दिया था। उसने एक प्रत्याशी को पैसे दिए और दुसरे को हड़का दिया था। और तीसरे को अगवा कर लिया था। और हम निर्विरोध इस चुनाव को जीत चुके थे। अम्मा पहनाए जाने वाले मालाओं तले जैसे दब गई थीं। जगदंबा चौधरी से हमारी मुलाकात सीधे गेट पर हो गई। मैंने झुककर उनके पैर छुए। उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया और माथे पर टीका लगाकर गोद में उठा लिया था। उसने कहा कि मैंने किसी और के लिए नहीं अपने बेटे के लिए कुर्सी छोड़ी है। और अगले दिन शपथ में जगदंबा पूरे कार्यक्रम में मौजूद रहे। उनके साथ में उनके कई गनर और बाहर कई सारी पजेरो खड़ी थीं। हम न न करते रहें पर वह हमें घर छोड़ कर गया था। मैं इस आदमी को पहले से ही सर पर चढ़ाना नहीं चाहता था। पर यह तो खुद हमें चढ़ा चुका था।

उधर पिताजी को जमानत मिल चुकी थी और मुकदमे में बार दौड़ना न पड़े इसलिए वे डेल्ही ही रुक गए थे। देर सवेर सच्चाई सामने आते ही उन्हें बहाल कर दिया जाता। लेकिन सबसे कठिन चीफ के खिलाफ सबूत जुटाना था। जो आसान नहीं था। उसने वे सभी फाइल पिताजी से रिसीव कराकर रखी थी। जिसमें उसका कहना था कि सब कुछ नियम और मानकों के अनुसार हुआ है। वे सारी रसीदें और खरीद की रिपोर्टें उस फाइल में दर्ज है जो पिताजी ले गए थे। जबकि ऐसा कुछ था ही नहीं। जाँच समिति

चीफ से भी पूछताछ कर रही है। पर मेरा तंत्र और मिली रही सूचनाओं को देखते हुए यह मानना है कि चीफ अपनी पहुँच का प्रयोग करते हुए बच निकलने वाला है। उस जाँच समिति का एक सदस्य उसका दूर का समधी निकल चुका है। और जज के साथ वे होटलबाजी करते हुए देखे जा रहे हैं। यह सब चीजें हौसलों को कम कर देने वाली साबित हो रही हैं। लेकिन पिताजी हिम्मत बांधे हुए है। और यह बात उनके लिए बड़ी सुकूनदेह साबित हुई है कि अम्मा चैयरमैन हो चुकी है। लेकिन वे यह बात भूल रहे थे कि आखिर काम तो इसी तंत्र के अंतर्गत करना है जिसके रास्ते जीवन धूसर होता चला गया है।

सब काम सही सही चल रहे थे। अगर इस तंत्र में वैध तरीके से भी काम किया जाए तो भी इतने पैसे आ जाते हैं कि कई सारी पीढ़िया बैठकर खा सके। मेरा दो घर सात-सात नक्काशीदार कमरों के बाद आलीशान कर दिया गया था। और एक स्कार्पियो द्वार पर खड़ी कर दी गई थी। और कुछ एक सुबह की बात है जब जगदंबा चौधरी हमारे घर आए थे। और चाय पीने के बाद उन्होंने कहा कि बेटे घर के आदमी हो तुमसे क्या छुपाना! हमारे घर का खर्चा, राशन और गाड़ी का पेट्रोल तो यहीं जिला मुख्यालय से ही चलता है। मैं समझा नहीं सर! अरे! भाई। तुम्हारे पिता जी रहते तो समझते। तुम क्या समझोगे? खैर। ...चौधरी मेरे कंधे की और झुक आया था। और कान से लग कर बोला था कि सुन रहे हैं कि अपने इलाके की नक्सलाइट बेल्ट में सड़कें बिछाने के लिए हजारों करोड़ की धनराशि आने वाली है। तो? तो बेटा अगर मुझे मिल जाता तो मेरा भी कार बार चलता और तुम्हें भी... फिर उसने और पास आकर चुपके से कहा कि चिंता मत करो! बेटा समझ लो तुम्हें डबल कमीशन दूँगा। ...वह क्या है न कि ऊपर के नेताओं से मेरा हँसी मजाक चलता है। ...सालों से मैनेज कर लूँगा। और वह तुम्हारा ही होगा। मेरा माथा वहीं झनक गया था। और जब तक चौधरी चला नहीं गया तब तक मैं एक सन्नाटे में बैठा रहा। चौधरी जिले का घोषित माफिया था। इसमे दो राय नहीं। आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में उसकी चार हजार के करीब ट्रकें चलती थीं।

जैसा कि आप जानते हैं कि मैं राजनीति विज्ञान का निहायत ही कमजोर विद्यार्थी हूँ। और इसलिए इस विषय का चुनाव किया था कि मुझे राजनीति में जाना था। एक सपना था, जो कमोबेश सच भी होता जा रहा था। पर उस दिन बात अंदर से महसूस

हुई कि समकालीन राजनीति में आने के लिए राजनीति विज्ञान से रत्ती भर के लेना देना नहीं है। या यूँ कहें कि इस राजनीति में पढ़ाई लिखाई से भी एक पैसे का नाता नहीं था। संविधान ने राजनीति में आरक्षण के माध्यम से यह व्यवस्था जरूर की थी पर इस व्यवस्था में जमीदार, भूमिधर, दलाल, शोषक, सामंत, हत्यारे अपना रूप बदलकर एक नए तरीके से इस तंत्र को अपहृत कर चुके थे... और जाहिर है लूट पाट भी एक बड़े स्तर पर नियोजित थे। और लोक तंत्र के नाम पर ऐसे ऐसे तमाशे थे जो समझने और उबरने में बेहद जटिल और कर्क रोग की तरह लाइलाज थे।

एक से बढ़कर एक ऐसी पार्टियाँ जिनका दावा था कि वे दबे कुचले की शुभचिंतक हैं लेकिन वे अपना टिकेट ऐसे ही माफियाओं को बाँटती थीं। जिनका इतिहास काला और खूनरंगेजी था। और एक नए तरीके से पोषक साबित हो चुकी थी। संविधान में सबकी गहरी आस्था थी। पर उसके नियम उन पर कम ही लागू होते थें। न्याय पालिका भी बिकी हुई संस्था साबित हो चुकी थी। तो जिस अँधेरे में हम रह रहे थे वह अबूझ और घटाटोप था। जिससे निकलने के रास्ते बहुत कम थे। अधिकतर विद्वान, लेखक, समाज सुधारक, चिंतक, क्रांतिकारी सब डेल्ही भाग चुके थे। गाँव गिराव जहाँ हम रहते थें ऐसे ही सड़न में ऊब चूब हो रहे थे। वहाँ ऐसे लोग कम थे जो किसी भी तरह का लोकतांत्रिक पहल करें और थे भी तो ऐसे फासीवादी जकड़न में जल्दी दम घोट देने वाले थे। भ्रष्टाचार, जातिवाद, क्षेत्रवाद, सामंतवाद, पुरुषवाद, भाईभतीजावाद सर पर चढ़ कर बोल रहे थे। तब भी ऐसे कई जानबूझकर जहर खाने वाले लोग मिल जाते थे जो कहते थे कि नहीं सब मजे में है। यह चीज हर जगह मौजूद थी चाहे वह दिल्ली हो चाहे वह अपना छोटा सा जिला।

मिस मुस्कराहट और उसके साथ आए हुए सपनों और थप्पड़ से भी तेज चले हुए धोखों को मैं तब तक नहीं भुला सकता जब तक पिताजी को न्यायालय निर्दोष नहीं साबित नहीं कर देता है। लेकिन इधर बीच इस संबंध में हुआ कुछ नहीं है। बस कुछ और दुःस्वप्नों में वृद्धि ही हुई है।

कुछ और दुःस्वप्न

कुछ और भी दुःस्वप्न आए थें। जो अगर पिछले सपनों की तरह सही साबित हो गए तो मेरा पतन निश्चित है। मैंने कई रातों में सपने टुकड़े टुकड़े देखे थे। और सभी स्मृति में गड्डमगड्ड हो जाते थे। एक रात मैं क्या देखता हूँ कि जगदंबा चौधरी के साथ हम मीटिंग में बैठे है। जगदंबा तो कोई सदस्य ही नहीं है। लेकिन बैठा है। साथ में उसके गनर हैं। सड़क के ठेके के मामले में मेरी उससे कुछ झड़प हो गई है। साथ में उसके गनर भी हैं। और उसने मेरे ऊपर गन की बौछार कर दी है। मैं लिथड़ा हुआ वहीं कुर्सी पर लटक गया हूँ। कमरे से उसे मैं जाते हुए मैं देखता हूँ तभी खिड़की से गुजरते हुए मैं देखता हूँ कि उसका चेहरा चीफ का हो गया है। सामने ही सड़क के पार मुख्यालय ऑफिस है। वहाँ बैठा हुआ पुलिस अधीक्षक मुझे देखता है। और हँसने लगता है। मैं लड़खड़ाते हुए बाहर सड़क पर आता हूँ तो पाता हूँ कि मिस मुस्कराहट अपनी स्कूटी स्टार्ट कर रही हैं। मैं उससे कहता हूँ कि कम से कम वह मुझे अस्पताल तक छोड़ दे। वह नहीं छोड़ती है और चली जाती है। मैं सड़क पर लिथड़ता हुआ चला जा रहा हूँ। अचानक मैं प्रेत बन जाता हूँ। मैं देखता हूँ कि सड़क पर मेरा शव है। मैं उसके बगल में बैठा हूँ और उस प्रेत की तरह हूँ जैसे कि कभी मैंने नाटक में रोल करते हुए रूप धरा था। मेरी लाश पर अम्मा रो रही हैं।

मैं उनके कंधे पकड़ कर कहता हूँ अम्मा! अम्मा! मैं यहाँ हूँ। तुम्हारे पास बैठा हुआ। पर अम्मा हैं कि सुन ही नहीं रही है। मेरे शव को को जब लोग जलाने वाले हैं तब दूर पश्चिम से एक धूसर सी मनुष्य की आकृति उभरती है। वह धीरे धीरे जब पास आती है तो मैं देखता हूँ कि वह पिताजी हैं। मैं आगे बढ़कर उनका हाथ पकड़ लेता हूँ। और कहता हूँ कि कब आए पिताजी। तब मेरा ध्यान उस हथकड़ी पर पड़ता है जो उनके हाथ में लगी हुई है। वे आगे बढ़ जाते हैं। मेरी लाश में आग लगती है। हड्डियाँ चिट चिट करके उड़ती हैं। आसमान में गाढ़ा धुआँ इकट्ठा हो जाता है। अँधेरे की तरह और सामने नदी में सूरज आहिस्ते आहिस्ते डूब जाता है। और काली रात की शुरुआत होने लगती है। फिर बारिश शुरू हो जाती है। मैं भीगने से बचने के लिए सामने नदी किनारे पीपल की ओर भागता हूँ। और जब बारिश खत्म होती है तब सब लोग जा चुके हैं। और मैं अपने घर का रास्ता इस कदर भूल गया हूँ कि घूम घाम कर उसी पीपल के नीचे पहुँच जा रहा हूँ।

बस यहीं मेरी नींद टूट जाती है। ऐसा दुःस्वप्न मैंने आज तक नहीं देखा था। शायद शेक्सपियर के नाटक में मैकबेथ ने भी ऐसा दुःस्वप्न नहीं देखा होगा। आगे क्या होगा मैं नहीं जानता। लेकिन मेरी इस कहानी को सुनने के बाद आप इस दुःस्वप्न के बारे में क्या राय रखते हैं? जरूर बताइएगा।